ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

दलित विमर्श: एक चेतना

Mukti Rathod

सारांश

शब्दकोश के आधार पर देखे तो दलित शब्द के अलग-अलग अर्थ हमे मिल जाते है। लेकिन दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है जिसे दबाया गया हो, जिसका दलन हुआ हो, दमन हुआ हो, शोषित, प्रताड़ित, उत्पीड़ित, अपेक्षित आदि। आधुनिक हिन्दी साहित्य में साहित्यकारों के द्वारा विमर्श के लिए एक नया आकार रचा गया है जिसके द्वारा दलित साहित्य को अध्ययन के लिए विस्तृत फलक प्रदान किया गया है। दलित विमर्श का मूल अर्थ उस साहित्य से है जिसमें दलितों ने खुद अपनी व्यथा को एक रूप दिया है। अपने जीवनकाल में दलितों को जिस पीड़ा को सहना पड़ा है, जो दुख उन्होंने भोगा है, दलित विमर्श उनकी वही पीड़ा को प्रगट करता है। जो समाज आज़ादी के इतने वर्ष बीतने के बाद भी अगर उपेक्षित समाज ही रहा हो, तो स्वतंत्रता प्राप्ति का कोई मतलब ही नहीं बनता। क्योंकि समाज में जो मान सन्मान उनको मिलना चाहिए वो उनको आजतक मिला ही नहीं। भारतीय समाज में जो वर्ण-व्यवस्था की गई थी वो कर्म के आधार पर नहीं, बल्कि धर्म के आधार पर की गई थी यह कहना गलत नहीं होगा। क्योंकि यह पूर्ण रूप से असमानता ओर शोषण के ऊपर आधारित है। और इसीलिए दलित साहित्य लिखने के पीछे का कारण है, दलित चेतना। जब साहित्य को समाज का दर्पण कहाँ गया है, तो फिर समाज के उन सभी मुद्दों को उजागर करना साहित्य का ही काम बन जाता है। दलित साहित्य उतना ही पुराना है जितना की हमारा हिन्दी साहित्य। यही कारण है की जो दलित ओर गैरदलित साहित्यकार है, उन्होंने समाज में व्याप्त इस अस्पृश्यता, छुआछूत को जड़ से निकालने के लिए साहित्य की रचना की।

मूल शब्द: दलित, दमन, उत्पीड़ित, साहित्य समाज का दर्पण, अस्पृश्यता

प्रस्तावना

मानव समाज वो पहले से ही जाति या वर्ण के बंधन में फँसा हुआ नहीं था। दलित शब्द का जो इतिहास है वो लगभग अत्यंत प्राचीन है। कई विद्धवानों ने दलित शब्द को अनेक अर्थ दिए है। दलित माने जिनका हक छिना गया है, जिनका शोषण हुआ है, जो अपने से उच्च जातिके लोगों से उत्पीड़ित है या यूं कहाँ जा सकता है की जिसे दबाया गया है वह समाज। दलित शब्द को बनाने वाले बेशक गौतम बुद्ध थे, लेकिन इस शब्द का प्रयोग महात्मा ज्योतिबा फुले ओर डॉ. बाबा साहब

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

आंबेडकर ने भी किया था। महात्मा गांधीजी ने सन् 1932 में अछूत समाज के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया था।[i]

दलित शब्द का अर्थ एवं परिभाषा

जब से दलित शब्द का उपयोग हो रहा है तब से इस शब्द की उत्पत्ति को लेकर विद्धवानों में मतभेद देखने को मिलते है। दलित शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'दल' धातु से हुई है। 'दल' का हिन्दी में अर्थ होता है चूर्ण करना, टुकड़े करना। अंग्रेज़ी में 'दल' का अर्थ होता है ब्रोकन, बर्स्ट। गुजराती में 'दल' का अर्थ होता है नाश करवामां आवेलु, पीड़ित।[ii] इस प्रकार से अगर देखा जाए तो दलित शब्द का अर्थ होता है दबाया गया, कुचल हुआ, नष्ट किया गया, पीड़ित, शोषित आदि। अर्थात् अलग-अलग शब्दकोशों में भी दलित शब्द के अर्थ में थोड़ा-थोड़ा अंतर होते हुए भी यह एक सा ही लगता है।

हम स्कूली शिक्षा से समाज के बारे में पढ़ते आ रहे है। भारतीय वर्ण-व्यवस्था के मुताबिक समाज को चार वर्णों में बाँटा गया है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। यह कर्म के आधार पर बनाई गई वर्ण-व्यवस्था थी। जिसमें ब्राह्मण का कार्य था शिक्षा प्राप्त करना और समाज को शिक्षा देना। क्षत्रिय का कार्य था शासन चलना और दूसरों की रक्षा करना। वैश्य का कार्य था व्यापार करना और समाज की ज़रूरतों को पूरी करना। तथा शूद्र यह वर्ग जो था उनका कार्य था समाज की तथा तीनों वर्णों की सेवा करना।[iii] लेकिन कब यह कर्म को छोड़ धर्म के आधारित हो गई पता ही न चला।

रामचन्द्र वर्मा के अनुसार दलित का अर्थ है, मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ।[iv]

हिन्दी साहित्यकार श्री ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार "दलित शब्द भाषावाद जातिवाद और क्षेत्रवाद को नकारता है तथा पूरे देश को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करता है। दलित शब्द उन्हें सामाजिक पहचान देता है, जिनकी पहचान इतिहास के पृष्ठों से सदा सदा के लिए मिटा दी गई है।[v] दलित शब्द का अर्थ किसी जाति विशेष से नहीं है और न ही हरिजन का पर्याय है, बल्कि यह तो सभी दलित-पिछड़ी, जातियाँ-उपजातियों को जोड़ता है। पहेले के समय में संतों के लिए या यूं कहे की संत साहित्य में संतों के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया गया है। लेकिन आज के समय में जो शब्द ज्यादा व्यवहार में आ रहे है वो है दलित और वंचित।

वैसे देखा जाए तो दलित समाज को भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति का दर्ज दिया गया है। डॉ. चंद्रकान्त बाँदिवडेकर ने दलित की परिभाषा देते हुए कहाँ है की "दलित यानि अनुसूचित जातियाँ, बौद्धिक कष्ट उठानेवाली जनता, मजदूर भूमिहीन गरीब किसान, खाना बदोश जातियाँ आदिवासी दलित शब्द की यह जाति निरपेक्ष व्यापक परिभाषा है। गांधीजी ने जिन जातियों को

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

'हरिजन' कहा था वे ही जातियाँ 'दलित' के नाम से पहचानी गई।"[vi] अर्थात् यहाँ पर ऐसे समाज की बात की गई है जिनके साथ अत्याचार हुआ। जिनके ऊपर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है, जो अपने से उच्च जाति के लोगों के कठोर और गंदे काम करने के बंधित है। यह वो लोग है जिनको पढ़ाई-लिखाई से दूर रखा गया, जो स्वतंत्र होकर अपना कार्य करने से वंचित है। यही लोगों को दलित माना गया है। दलित साहित्य की जितनी भी परिभाषाएं है, उनका एक मात्र स्वर सामाजिक परिवर्तन है। जिनका प्रेरणा मिली है डॉ. बाबा साहब के विचारों से। डॉ. बाबा साहब दलितों के पथदर्शक माने जाते है। इनका कारण ही आज जो साहित्य लिखा जा रहा है, वही दलित साहित्य माना गया है। ये जो साहित्य है उसकी वेदना पूरे समाज की वेदना है, यहाँ पर 'मैं' की कोई जगह नहीं है। जिसने गुलामी भोगी है, वही जानता है उसकी पीड़ा, और जो जानता है वही पूरा सच कह पाता है। क्योंकि कई बार आधा सच भी जूथ के बराबर होता है।

दलित विमर्श और हिन्दी साहित्य

साहित्य को समाज का दर्पण माना गया है, क्योंकि समाज में जो कुछ भी होता है, उसको साहित्यकार शब्दों में ढालकर समाज के सामने पेश करता है। लेकिन जब बात दलितों की आती है तो तब ये कार्य भी थोड़ा मंद होता दिखाई देता है, लेकिन जब हमारे संविधान रचयिता डॉ. भीमराव आंबेडकर ने आगे आकर दलित समाज को उजागर करने का प्रयास किया तब जाकर कई साहित्यकार हो गए, जिन्होंने दलितों के विषय में सोचा और उनके जीवन के ऊपर, उनके कार्य के बारे में, उनको शिक्षण जगत में आगे बढ़ाने के लिए या फिर दलितों में चेतना जगाने के लिए दलित साहित्य लिखना आरंभ किया। हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य उतना ही प्राचीन है जितना की हिन्दी साहित्य का इतिहास। दलित साहित्य स्वानुभूति और सहानुभूति का साहित्य है। जो व्यक्ति दलित समाज में पैदा हुआ है उसे ही स्वानुभूति हो सकती है और सहानुभूति है वो तो किसी के भी हृदय में पैदा हो सकती है। इसके लिए दलित समाज में पैदा होना आवश्यक नहीं है। साहित्य में किसी को भी अपनी बात कहने से रोक नहीं जा सकता। साहित्यकार जो है वो किसी भी धर्म, जाति, देश पर लिख सकता है। प्रेमचंद के कथा साहित्य में 'दलित विमर्श' पर विचार करते हुए सुभाष चंद्र ने लिखा है की प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं में समाज की वास्तविकता को जिस कुशलता के साथ अभिव्यक्त किया है वह भारत के हिन्द रचनाकारों के लिए आदर्श है। उन्होंने समाज के सभी वर्गों के चित्र अपनी रचनाओं में समाहित किए है। प्रेमचंद जी की रचनाओं में दलितों के प्रति सहानुभूति, करुणा, दया, संवेदना के साथ साथ शोषण, अत्याचार, अन्याय, उत्पीड़न से मुक्ति के लिए संघर्ष को नज़रअंदाज नहीं किया गया। प्रेमचंद की कुछ रचनाएं है जो दलित जीवन के विविध पक्ष तथा चित्र अभिव्यक्त करती है जैसे की, कर्मभूमि, रंगभूमि, गोदान, दूध का दाम, गुल्ली-डंडा, ठाकुर का कुआं आदि।[vii] प्रेमचंद जी ने अपने उपन्यास 'कर्मभूमि' में

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

दलितों के लिए अत्यंत संवेदनशील मुद्दे मंदिर प्रवेश की ही समस्या नहीं उठाई, बल्कि दलित कर्म के संगठित होकर संघर्ष करने का भी विस्तार से चित्रण किया है। तो दूसरी ओर जयप्रकाश कर्दम ने अपने उपन्यास 'छप्पर' में एक मजदूर किसान की बात की है सुक्खा चमार। वह अपने इकलौते बेटे चंदन को शहर में भेजकर पढ़ा लिखकर डॉक्टर बनाना चाहता है। साथ ही वह यह भी चाहता है चंदन बाद आदमी बने, धन संशय करे, समाज की सेवा करे, कार खरीदकर उसे ओर माँ रमिया को उसमें बिठकर घुमाए। यहाँ पर सुक्खा के चरित्र द्वारा समाज में चेतन जगाने का कार्य किया गया है। हिन्दी दलित साहित्य के प्रमुख साहित्यकार एवं विद्वान आलोचक ओमप्रकाश वाल्मीकि का कहना है की- "सौन्दर्यशास्त्र की विवेचना में 'सौन्दर्य कल्पना', 'बिम्ब' और 'प्रतीक' को प्रमुख माना है। विद्वानोंने जबकि, सौन्दर्य के लिए सामाजिक यथार्थ एक विशिष्ट घटक है। समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्त्व और न्याय इन जीवन मूल्यों को दलित साहित्य के सौन्दर्य तत्व का केंद्र माना जा सकता है। दलित साहित्य का जन्म सामाजिक यथार्थ के कारण ही हुआ है। दलित साहित्य के आलोचकों में डॉ. धर्मवीर, ओमप्रकाश वाल्मीकि, कंवल भारती, जयप्रकाश कर्दम, डॉ. एन. सिंह, मौहनदास नैमीशराय, बेचैन, डॉ. कुसुम मेघवाल आदि ने हिन्दी की कई महत्वपूर्ण रचनाओं की समीक्षा की। अपनी पुस्तक दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने वर्ण व्यवस्था के अमानवीय बंधनों से शताब्दियों से दलितों के भीतर हीनता भाव को पुख्ता किया है। धर्म और संस्कृति की आड़ में साहित्य ने भी इस भावना की नींव मजबूत की है। ऐसे सौन्दर्यशास्त्र का निर्माण किया गया जो अपनी सोच और स्थापनाओं में दलित विरोधी है, और समाज के अनिवार्य अंतरसंबंधों को खंडित करने वाला भी। संक्षेप में हिन्दी साहित्य आलोचना परंपरागत शास्त्रीय सिद्धांतों को खारिज करते हुए सामाजिक यथार्थ के आधार पर निर्धारित मापदंडों को द्रष्टि में रखकर दलित साहित्य की समीक्षा करती है। योग्य समय पर हिन्दी दलित आलोचना के उद्भव-विकास ने हिन्दी साहित्य को स्थिरता एवं मजबूती प्रदान की है।"[viii]

दलित चेतना का आधार :-

सबसे पहले ये जानना जरूरी है की दलित चेतना एक परिवर्तन का परिणाम है। दलित कोई एकरूप समाज नहीं है। वह हमें अलग-अलग रूप में देखने को मिलता है, दलित आंदोलन की भी हमें अलग-अलग विचाए धाराएं देखने को मिलती है। दलित साहित्य लिखने के पीछे की अगर कोई वजाह है तो वो है, दलितों में चेतना जगाना। क्योंकि उससे ही स्वाभिमान जगता है। आजतक हमने देखा की जो पिछड़ा वर्ग है उनके साथ अन्याय, शोषण होता रहा है। उनको सभी जगहों से तिरस्कृत कीया गया है। इन सभी घटनाओं को रोकने के लिए डालित साहित्य लिखा जाने लगा। जिसमें ओमप्रकाश वाल्मीकि कृत 'सलाम' कहानी के जिसमें क्रांतिकारी विचारों की बेबाक अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। 'सलाम' कहानी के बारे में 'सुधीर सागर' के विचार है- "सलाम के

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

माध्यम से ओमप्रकाश वाल्मीकि रूढ़िवादी परंपरा को तोड़ते हैं, जिसमें आज भी दलित जकड़ा हुआ है। 'सलाम' रूढ़िवादी परंपराओ के खिलाफ दलित चेतना की यथार्थ अभिव्यक्ति की कथा है।"[ix]

साहित्य को समाज का दर्पण माना गया है। जिसका कार्य होता है समाज में होने वाली घटनाओं को लोगों के सामने पेश करना। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य की परिभाषा देते हुए कहा है, प्रत्येक देश कआ साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का प्रतिबिंब होता है, तव यह निश्चित है की जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। लेकिन यहाँ ओमप्रकाश वाल्मीकि का मानना यह है की हिन्दी साहित्य में खोजने पर भी हमें अपना चेहरा, अपना अस्तित्व देखने को नहीं मिलता। इसी कारण से दलितों को हिन्दी साहित्य लिखने की जरूरत पड़ी, क्योंकि हिन्दी साहित्य में उनकी स्थितियों को नहीं दर्शाया जा रहा था। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के मत से हिन्दी साहित्य उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार कर रहा था। तभी तो दलित चेतना जाग्रत हुई और दलित साहित्य अस्तित्व में आया।"[x] 19 वीं सदी में डालित चेतना का सूत्रपात करनेवाले महात्मा ज्योतिबा फुले थे। जिन्होंने सामाजिक विषमता को ज्यादा महत्व दिया था। तथा निम्न जातियों और स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार करके उनमें ज्ञान प्रसार द्वारा चेतना का संचार किया। अर्थात् समाज में फैली छुआछूत, दयनीय स्थिति, अशिक्षा, अन्याय, शोषण, अत्याचार एवं गुलामी का डटकर विरोध करके समाज को जागृत करने को ही उन्होंने अपना ध्येय बना लिया था।"[xi] जिसमें बाबा साहब आंबेडकर का नाम भी इसी सूची में आता है।

इस प्रकार खोज करने पर ज्ञात होता है की दलित चेतना एक बदलाव का परिणाम है। दलित चेतना तब जागृत होती है जब दलित व्यक्तियों को अपने साथ हो रहे अन्याय, अपने अधिकारों के बारे में पता चलता है। और वो उसके खिलाफ आवाज़ उठाता है। क्योंकी दलित चेतना क्रांति से जुड़ी होती है, और जो विद्रोह होता है वह भी अपने हक के लिए होता है। इसी लिए यह कहना उचित है की दलित चेतना, दलित आंदोलन और सामाजिक बदलाव का नाम है।

दलित साहित्यकार और उनकी रचना

आधुनिक समय में हम देखे तो दलित साहित्य की हर भाषा में रचना हो रही है। लेकिन सबसे ज्यादा अगर कोई भाषा में लिखा जा रहा है तो वो है हिन्दी भाषा में। और वो भी अनुभव और चिंतन कर आधार पर। यहाँ पर दलित लेखक और उनकी रचना के बारे में संक्षिप्त माहिती दि गई है।

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

ओमप्रकाश वाल्मीकि

ओमप्रकाश जी की कहानी है 'शवयात्रा'। इस कहानी में दो जातियों के बीच की उंच नीच को दिखाया गया है।

अनीता भारती

'एक थी कोटेवाली' अनीता भारती की ये कहानी से हमे सीखना चाहिए की हम किसी भी जाति से आते हो पर हमारे अंदर ज्ञान, आत्मविश्वास, सीखने की चाह, गलत का विरोध और सही-गलत पहचानने की क्षमता अवश्य होनी चाहिए। तब जाकर हम खुद कों, परिवार को, समाज को, शहर या देश को बदल सकते है। स्त्रियों के मन में चेतना जगाने के लिए यह कहानी उत्तम है।

उर्मिला पवार

कहा जाता है की औरत ही औरत की दुश्मन होती है और औरत ही औरत की सहेली। ये बात उर्मिला पवार की 'औरतजात' कहानी से साबित होती है। जो चेतना जगाती है।

मोहनदास नैमीशराय

उनकी रचनाए है अपने-अपने पिंजरे(हिन्दी दलित साहित्य की प्रथम आत्मकथा), आज बाजार बंद है, क्या मुझे खरीदोगे, जख्म हमारे (उपन्यास) आदि।

इसके अतिरिक्त सूरजपाल चौहान, कंवल भारती, डॉ. धर्मवीर भारती, जय प्रकाश कर्दम, उमराव सिंह जाटव, सुभाष चंद्र, कर्मशील भारती, रजनी सीसोदिया, इत्यादि ने भी कई महत्वपूर्ण रचनाओं से दलित साहित्य का सतत विकास किया है।

निष्कर्ष

सबसे पहले तो यह कहना जरूरी है की स्वतंत्रा प्राप्ति के बाद भी समाज में कुछ लोग, कुछ जातियाँ है जो अभी भी गुलामी की जंजीरों को तोड़ नहीं पाई है, या यूं कहे की उनको उस जंजीरों को तोड़ने नहीं दिया गया। जिसके कारण छुआछूत, जातिगत भेदभाव, शोषण, अन्याय जैसे रोग हमारे समाज में फैल चुके है। इसका भयंकर रोग का इलाज करने के लिए और समाज में अपनी परिस्थिति को सुधारने के लिए लेखकों के द्वारा साहित्य का सृजन किया जाने लगा। इन सबमें डॉ. बाबा साहब का जो सपना था की आर्थिक तंगी होते हुए भी हमे शिक्षा पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। और यही बात आज के डालित साहित्यकारों के लिए प्रेरणास्त्रोत साबित हुई है। दलित साहित्य को सफलता कर उच्च स्थान प्राप्त करवाने में अगर किसीका नाम आगे आता है तो वो है ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का। इस प्रकार यह कहना सर्वथा उचित होगा की दलित साहित्य के लिए

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

आधुनिक काल एक स्वर्ण युग जैसा है। और दलित साहित्य का अंतिम लक्ष्य है दलित समाज में बदलाव की इच्छा।

संदर्भ

1. एस. एल. सागर,, हरिजन कौन और कैसे, सागर प्रकाशन मैनपुरी, उ.प्र., 2001, पृ-14
2. गुजराती, हिन्दी, और मराठी दलित साहित्य (आत्मकथा विधा के संदर्भ में), डॉ. हेतल चौहाण, पृ-14, 15
3. गुजराती, हिन्दी, और मराठी दलित साहित्य (आत्मकथा विधा के संदर्भ में), डॉ. हेतल चौहाण, पृ-4
4. संक्षिप्त शब्द सागर- रामचन्द्र वर्मा(संपादक) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, नवम संस्करण, 1987, पृ-468
5. दलित विमर्श- चिंतन प्रकाशन- पृ-34
6. भारतीय साहित्य में दलित एवं स्त्री-संपादक चमनलाल, पृ-20
7. सुभाष चंद्र, दलित मुक्ति आंदोलन, आधार प्रकाशन पंचकूला, 2010, पृ-15
8. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली, 2001, पृ-109
9. आजकल :(दिसंबर - 2008), : संपादक : सीमा ओझा, पृ.8
10. दलित विमर्श : एक चेतना- निर्मला
11. भारतीय दलित साहित्य, दर्पण प्रकाशन, पृ- 144

ENDNOTES

1. एस. एल. सागर,, हरिजन कौन और कैसे, सागर प्रकाशन मैनपुरी, उ.प्र., 2001, पृ-14
2. गुजराती, हिन्दी, और मराठी दलित साहित्य (आत्मकथा विधा के संदर्भ में), डॉ. हेतल चौहाण, पृ-14, 15
3. गुजराती, हिन्दी, और मराठी दलित साहित्य (आत्मकथा विधा के संदर्भ में), डॉ. हेतल चौहाण, पृ-4
4. संक्षिप्त शब्द सागर- रामचन्द्र वर्मा(संपादक) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, नवम संस्करण, 1987, पृ-468

ISSN NO.2395-0692
IJAHMS International Journal of Arts, Humanities and Management Studies

5. दलित विमर्श- चिंतन प्रकाशन- पृ-34
6. भारतीय साहित्य में दलित एवं स्त्री-संपादक चमनलाल, पृ-20
7. सुभाष चंद्र, दलित मुक्ति आंदोलन, आधार प्रकाशन पंचकूला, 2010, पृ-15
8. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली, 2001, पृ-109
9. आजकल :(दिसंबर - 2008), : संपादक : सीमा ओझा, पृ.8
10. दलित विमर्श : एक चेतना- निर्मला
11. भारतीय दलित साहित्य, दर्पण प्रकाशन, पृ- 144

www.ijahms.com